आनन्दमय वैवाहिक जीवन के लिए ईश्वरीय सिध्दांत

परमेश्वर के वचन :

उत्पत्ति १:२६-२८; उत्पत्ति २:१८-३२; यूहन्ना १२:१-३,
१६:२४; इफिसियों ५: १६-३३।

सृष्टि के प्रारम्भ से निर्धारित सम्बन्धों में, विवाह परमेश्वर के अनुसार सबसे अधिक पवित्र सम्बन्ध है । हम परमेश्वर के वचन में यह पाते हैं, कि जो लोग परमेश्वर की स्वर्गीय योजनानुसार सम्बन्ध में जोड़े जाते हैं, उन्हें असाधारण आनन्द और खुशी प्राप्त होती है । उदाहरण के लिए हम यशायाह ६२:५, में देखते हैं, "जैसा कि एक जवान पुरुष एक कुँआरी से ब्याह करता है, वैसे ही तेरे पुत्र तुझ से ब्याह करेंगे, और जिस प्रकार से एक दुल्हा दुल्हन को देखकर प्रसन्न होता है, उसी प्रकार तेरा परमेश्वर तुझ पर प्रसन्न होगा।" हम इसी प्रकार यशायाह ६१:१० में पढ़ते हैं, " मैं यहोवा के कारण अति आनन्दित होऊँगा, मेरा प्राण परमेश्वर के कारण मगन रहेगा; क्योकि उसने मुझे उद्धार के वस्त्र पहिनाए, और धर्म की चद्दर ऐसे ओढा दी है जैसे दुल्हा फूलों की माला से अपने आपको सजाता और दुल्हन अपने गहनों से अपना सिंगार करती हैं।" इसी तरह यिर्मयाह ३३:११ में लिखा है, "इन्हीं में हर्ष और आनन्द का शब्द, दुल्हे-दुल्हिन का शब्द, और इस बात के कहनेवालों का शब्द फिर सुनाई पडेगा कि सेनाओं के यहोवा का धन्यवाद करो, क्योंकि यहोवा भला है, और उसकी करुणा

सदा की है!”प्रकाशित वाक्य १९:७ में हम देखते हैं, “आओ, हम आनन्दित और मगन हों, और उसकी स्तुति करें, क्योंकि मेम्ने का ब्याह आ पहुँचा, और उसकी पत्नी ने अपने आप को तैयार कर लिया है।” इस तरह परमेश्वर के वचन से यह स्पष्ट है कि परमेश्वर ने यह सम्बन्ध उन लोगों को पुरा आनन्द देने के लिए निर्धारित किया है, जो उसकी सिद्ध स्वर्गीय योजनानुसार जोड़े जाते हैं तथा जो बहुत प्रार्थना के बाद विवाह का निर्णय लेते हैं।

प्रभु यीशु मसीह इस दुनिया में आये, दु:ख उठाया, मारे गए तथा फिर से जीवित हुए तथा फिर से जीवित हुए ताकि हमें भरपूर आनन्द मिले (यूहन्ना १५:११ के अनुसार) यह देखकर दु:ख होता है, कि बहुत ही कम विश्वासी वैवाहिक जीवन की इस प्राप्त कर पाते है, जो कि परमेश्वर अपनी इच्छानुसार इस पवित्र सम्बन्ध के द्वारा देना चाहता है। बहुत से मामलों में जब वे विवाह की योजना बनाते हैं प्रभु के वचन की ओर ध्यान नहीं देते और उसे उचित स्थान नहीं देते। इसी कारण बहुत से घरों में हमें मतभेद की आत्मा तथा झगड़ा देखने को मिलता है, तथा वे एक दुसरे के द्वारा ही कम आशीष पाते हैं। हर जगह हमें दु:खी और टूटे हुए परिवार देखने को मिलते हैं। कुछ धनवाद लोग अपनी शादी पर बहुत खर्च करते है परन्तु कुछ समय बाद वे अलग हो जाते है। इसी तरह, कुछ बहुत अधिक शिक्षित लोग भी पाते हैं कि उनका ब्याह असफल रहा हैं । वे अपने वैवाहिक जीवन की शुरुआत बड़े आनन्द और उम्मीद से करते हैं, परन्तु जल्दी ही पाते हैं कि उनके लिए साथ-साथ एक होकर रहना अत्यन्त कठिन है।

परमेश्वर के वचन के अनुसार वैवाहिक सम्बन्ध के द्वारा अत्याधिक आशीष प्राप्त करने के लिए आठ आधारमूल ईश्वरीय सिध्दान्तों का पालन किया जाना चाहिए। इनके द्वारा

केवल उन्हें ही आशीष मिलती है जो इनके सम्पर्क में आते हैं। एक स्वस्थ शरीर के लिए हमें ताजी हवा,अच्छा पानी, अच्छा भोजन तथा शारीरिक व्यायाम की आवश्यकता होती है। अच्छी फसल के लिए हमें अच्छी जमीन,खाद, पानी, अनावश्यक पौधों को हटाने तथा कीड़ो से बचाव की आवश्यकता होती है। इसी तरह, सुखी वैवाहिक जीवन के लिए आठ ईश्वरीय सिद्धान्त हैं।

१. ईश्वर की सिध्द इच्छा :

पहला सिध्दान्त यह है, कि जो लोग विवाह करने जा रहे हैं, उन्हें इस सम्बन्ध के विषय में ईश्वर की सिध्द इच्छा आवश्यक रुप से जाननी चाहिए। उन्हें बाह्य आकर्षण, शारीरिक सुन्दरता, सम्पत्ति तथा सांसारिक योग्यताओं के वशीभूत नहीं होना चाहिए। बहुत से लोगों के विचार, वैवाहिक जीवन के बारे में बहुत गलत होते हैं। कुछ लोग सुन्दरता,धन तथा शिक्षा को सुख आधार मानते हैं । इसी कारण उन्हें अन्त में निराशा होती है । जो लोग ब्याह करने वाले हों उनके लिए यह बहुत जरूरी है, कि वे काफी समय तक प्रार्थना में लगे रह कर प्रभु को समय दें, ताकि वह अपनी सिध्द इच्छा प्रगट कर सके; और वे उस सिध्द इच्छा का सबूत दे सके । इफिसियों ५:१७ में प्रभु का वचन कहता है, “इस कारण निर्बुद्धि न हो, पर ध्यान से समझो, कि प्रभु की इच्छा क्या है?” रोमियो १२:२ में वचन कहता है, “और इस संसार के सदृश न बनो; परन्तु तुम्हारी बुद्धि के निए हो जाने से तुम्हार चाल-चलन भी बदलता जाए, जिससे तुम परमेश्वर की भली, और भावती, और सिध्द इच्छा अनुभव से मालूम करते रहो।” प्रभु की इच्छा को जानने और पुरी करने के द्वारा हम परमेश्वर का अनुग्रह और सहायता प्राप्त करते हैं । मत्ती १२: ५० में प्रभु ने कहा, “क्योंकि जो कोई मेरे स्वर्गीय पिता की इच्छा पर

चले वही मेरा भाई और बहिन और माता है ।" जो लोग नया जीवन प्राप्त कर लेते हैं, उनमें प्रभु यीशु मसीह का जीवन नदी की तरह प्रवाहित होती है । जो लोग जीवन नहीं प्राप्त कर सके हैं, उनके पास अनन्त जीवन नहीं है, और वे भी ईश्वर की इच्छा नहीं जान सकते । इसीलिए शादी कराने से पहले हम उनसे जो जोड़े जाने को हैं पूछते हैं कि क्या वे नया जन्म पाए हैं? क्या उनके पाप माफ हो चुके हैं ? क्या उन्होंने अनन्त जीवन का वरदान प्राप्त कर लिया है? दुल्हा और दुल्हन को व्यक्तिगत रुप से बहुत प्रार्थना करनी होती है ताकि इस सम्बन्ध में ईश्वर की सिध्द इच्छा जाने। किसी को नहीं मालुम कल क्या होगा । हमारा स्वास्थ्य गिर सकता है, अथवा परिस्थितियाँ बदल सकती है। हमें नहीं मालूम हम कब तक जीवित रहेंगे। केवल ईश्वर ही प्रारम्भ से अन्त तक की बातें जानता है। इसीलिये हमें अपने जीवन के विषय में परमेश्वर की सिध्द इच्छा जानना चाहिए । भजन संहित १४३ : १० में भजन का लिखनेवाला कहता है, "मुझ को यह सिखा, कि मैं तेरी इच्छा क्योंकर पूरी करुँ, क्योंकि मेरा परमेश्र तू ही है । तेरा भला आत्मा मुझ को धर्म के मार्ग में ले चले।" जिनका ब्याह होता है, उन्हें सच्चाई के साथ तथा ईमानदारी से यह कहने योग्य होना चाहिए कि, "इस व्यक्ति को प्रभु ने मेरे लिए अपनी इच्छानुसार चुना है।" सोना, चाँदी, काम-धन्धे तथा कपडों आदि के विषय में विचार करने से पहले उन्हें ईश्वर की इच्छा मालूम करनी चाहिए ।

२. ईश्वरीय प्रेम :

दूसरी बात, जिन लोगों का ब्याह हो रहा है उन्हें प्रभु से प्रार्थना करनी चााहिए कि प्रभु उनके हदयों में ईश्वरीय, शुद्ध और आत्मिक प्रेम एक दुसरे के लिए भर दे । यह प्रेम शारीरिक आकर्षण, सांसारिक संपत्ति अथवा योग्यता पर आधारित नहीं रहता । ऐसा प्रेम

आन्तरिक अनुभव होना चाहिए; और यह परमेश्वर का वरदान है । इफिसियों ५:२५ में प्रभु कहते हैं, "हे पतियों, अपनी अपनी पत्नी से प्रेम रखो, जैसा मसीह ने भी कलीसिया से प्रेम करके अपने आप को उसके लिए दे दिया।" यही उपदेश २८ और ३३ पदों में भी दिया गया है। प्रभु ने हमसे कैसे प्यार किया ? हमारा न कोई भाग्य था न योग्यता, हमने उसे खेदित और घायल किया था, फिर भी उसने हममें से प्रत्येक से प्रेम किया, और अपना शरीर हमारा सृजनहार है। यद्यपि हमने उसके लिए कुछ नहीं किया, वह हमारे लिए मर गया। ऐसा ईश्वरीय प्रेम पति और पत्नी के बीच होना चाहिए । उन्हें विश्वास के साथ प्रार्थना करनी चाहिए, "प्रभु यीशु मसीह, हम आपके द्वारा, आपकी उपस्थिति में जोडे गये है। कृपया स्वर्ग से अपना प्रेम हमारे हदयों में एक दुसरे के लिए उंडेलिए । घर के सामान, मोटारकार, जवाहरात, डिग्री और सम्पत्ति किसी घर को आनन्द से नहीं भर सकती। यह परमेश्वर का प्रेम है जो उनके कुटुम्ब को सुखी बनाएगा। विवाहित जीवन के प्रारम्भ ही से उन्हें प्रभु से ऐसे प्रेम की माँग करनी चाहिए। प्रभु ने कहा, "मांगो, तो तुम्हें दिया जायगा।" (मत्ती ७:७)। सबसे पहले प्रभु का जीवन उनमें बहना चाहिए। तब सच्चा स्वर्गीय प्रेम उन्हें सच्चे सहयोगी, मित्र, सहकर्मी और साथी बनाएगा। परीक्षाओं, तकलीफों और दोनों को बहुत ही निकट सम्बन्ध में खीचे लाएगा।

३. प्रभु यीशु मसीह का शिरत्व :

तीसरा सिध्दान्त : विवाहित जीवन के प्रारम्भ ही से पति-पत्नि को हर काम में प्रभु यीशु मसीह के शिरत्व के आधीन आना चाहिए। वह मण्डली का जीवित सिर है, और उस अपने विवाहित जीवन में हमेशा वही स्थान देना चाहिए।

हम यूहन्ना १२:१-३ देखते हैं, प्रभु यीश मशीह बैतनियाह में एक घराने का सिर बन गया। प्रारम्भ में मरियम और मार्था ने प्रभु यीशु मसीह को एक आदरणीय मेहमान के रुप में ग्रहण किया। प्रभू ने उस घर में मौत और दु:ख को आने दिया, ताकि वे उसके जी उठने की सामर्थ तथा मृत्यु के ऊपर की सामर्थ का अनुभव कर सके। प्रभु यीशु मसीह केवल एक भविष्यद्वक्ता अथवा एक महान पुरुष नहीं है, वह तो स्वयं परमेश्वर है। केवल ईश्वर को मृत्यु के ऊपर सामर्थ है। किसी व्यक्ति ने कभी भी मौत पर विजय नहीं पाई। जब प्रभु यीश ने कहा, “लाजर बाहर निकल आ,” तो वह जो चार दिनों से कब्र में था, एकदम बाहर निकल आया। प्रभु यीशु मसीह स्वयं ही पुनरुत्थान है तथा जीवन भी है, जैसा कि उन्होंने यूहन्ना ११:२५ में कहा था। जब तक यह आश्चर्य कर्म नहीं हुआ था, वे नहीं जानते थे कि प्रभु यीशु कि प्रभु यीशु ही उनका सृजनहार है जो कि उनके लिए मनुष्य बन गया था। जब उन्होंने जान लिया कि वह स्वयं परमेश्वर है, तब उन्होंने अपने जीवन तथा कुटुम्ब का सम्पूर्ण भार उसका सौंप दिया। दूसरे शब्दों में, प्रभु यीशु मसीह उनकी विनती को सुनकर उनके कुटुम्ब का जीवित सिर बन गया। सुखी परिवार के लिए यह आवश्यक है कि घर के सदस्य प्रभु यीशु मसीह के शिरत्व को स्वीकार करें। उन्हें विश्वास से कहना चाहिए, “प्रभु यीशु मसीह, आप हमारे सृजनहार है। सारी सामर्थ आपकी है। आप हमारे लिए मनुष्य बन गए,हमारे बदल आप मर गए, और हम अपने दिलों का, जीवन का तथा योजनाओं का सारा भार आपको सौंपते हैं। हम आपकी अनुमति के बिना कुछ नही करेंगे। इस प्रकार उन्हें अपना विवाहित जीवन प्रारम्भ करना चाहिऐ। पति को कहना चाहिए, “प्रभु यीशु मशीह, यह आपका कुटुम्ब है। हम आपके बच्चे हैं। मैं इस घर में अपनी अथवा अपनी पत्नी की इच्छा पूरी नहीं करना चाहता, परन्तु

आपकी इच्छा पूरी हो।” इसी प्रकार से पत्नी को भी प्रभु यीशु मसीह के शिरत्व को स्वीकार करते हुए कहना चाहिए, “हां प्रभु, यह मेरा कुटुम्ब नहीं है। यह आपका कुटुम्ब है। आपने हमें यह परिवार दिया है। इस परिवार में मेरी अथवा मेरे पति की इच्छा नहीं परन्तु आपकी इच्छा पूरी हो। नहीं तो पति अपनी पत्नि से कहेगा, “तुम मेरी पत्नि हो, तुम्हें मेरा बात सुननी चाहिए। यदि तुम मेरा बात नहीं मानोगी तो मैं जबरदस्ती अपनी बात मनवाऊँगा। देखो मैं क्या करुंगा।” तब पत्नी कहेगी, “मैं तुमसे ज्यादा जानती हूँ। मैं तुम्हारी बात नहीं सुनूंगी। इस तरह झगडा प्रारम्भ होता है। शुरु में तो वे दरवाजे और खिडकियां बन्द करकें लडते हैं, पर बाद में खुल्लम-खुला लडते हैं, यहां तक कि सडक पर भी। सुखी परिवार के लिए उन्हें प्रभु यीशु के शिरत्व की आधीनता स्वीकार करनी चाहिए। कहीं भी जाने या कुछ भी करने से पहले यह उनके वैवाहिक जीवन का प्रतिदिन का अभ्यास होना चाहिए। उसकी इच्छा हमारे लिए सबसे अच्छी है, क्योंकि वह हमें हमारी समझ और कल्पना से बढकर प्रेम करता है।

४. पुनरुत्थान की शक्ति :

बहुत सी कठिनाइयों में होंकर उन्हें अपने वैवाहिक जीवन में से गुजरना पड़ सकता है। ऐसे समय मसीह के जी उठने की सामर्थ्य को उन्हें अपने में काम करने देना चाहिए। लाजरस चार दिनों से कब्र के अन्दर था, उसमें से गन्ध आ रही थी, परन्तु प्रभु की आज्ञा सुनते ही वह कब्र से बाहर आ गया। वह प्रभु यीशु मसीह की जी उठने की सामर्थ का प्रतीक है। हर परीक्षा, परख, मुसीबत और कठिनाई के लिए यह सामर्थ काफी है। आप चाहे जो भी हों, धनी, गरीब, अनपढ या पढे-लिखे, बडे या छोटे, मनुष्य होने के नाते आपको समस्याओं, कमजोरियों,

परीक्षाओं, तथा कठिनाईयों का सामना करना पडता है, जो कि स्वाभाविक है। इन सब पर विजय पाने का रहस्य प्रभु की पुनरुत्थान की शक्ति को अपना लेना है। उन्हें विश्वास से कहना चाहिए, “प्रभु यीशु मसीह, हम इस समस्या का सामना कर रहे हैं। हममें इसका सामना करने की योग्यता नहीं है। कृपया हमें अपने पुनरुत्थान की सामर्थ दें ताकि हम इस समस्या पर जय पा सकें।” इस सामर्थ के द्वारा वे हर परिस्थिति पर जय सकते हैं। उन्हें अपनी सामर्थ पर भरोसा रखना नहीं रखना चाहिए। परन्तु पुनरुत्थान की सामर्थ पर भरोसा रखना चाहिए। पौलुस प्रेरित फिलिप्पियों ४:१३ में कहता है, “जो मुझे सामर्थ देता है उसमें मैं कुछ कर सकता हुं।” वह प्रभु की पुनरुत्थान की सामर्थ के विषय ही कहता है । फिलिप्पियों ३:१० में वह कहता है,“और मैं उसको और उसके मृत्युत्र्जय की सामर्थ को जानूं।”इसी सामर्थ के द्वारा वे सारी तकलीफों पर जय पा सकेंगे।

५.सच्ची संगति:

उन्हें इस योग्य होना चाहिए कि वे सच्ची संगति कर सकें। प्रभु ने लाजर को जिलाया उसके पश्चात उसके साथ भोजन किया। यूहन्ना १२:२ में लिखा है, “वहाँ उन्होंने उसके लिए भोजन तैयार किया, और मार्था सेवा कर रही थी, और लाजर उनमें सें एक था जो उसके साथ भोजन करने के लिये बैठे थे। मेज पर रखा भोजन आत्मिक भोजन की और संकेत करता है। जिस प्रकार शरीर को स्वस्थ रखने के लिए भोजन की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार आत्मा के लिए हमें आत्मिक भोजन की जरुरत पड़ती है। यह भोजन प्रभु यीशु

के साथ संगति करने पर प्राप्त होता है । इस उदेश्य से उन्हें अपना दिन घुटने पर आकर प्रार्थना और प्रभु के वचन के द्वारा प्रारम्भ करना चाहिए। उन्हें प्रार्थना करनी चाहिए, “प्रभु हमें आत्मिक और स्वर्गीय भोजन की भूख है, हम आपकी आवाज सुनना चाहते हैं। कृपया हम दोनों से बातें करिये।”इस इच्छा के साथ उन्हे अपनी बाइबल उत्पत्ति से लेकर प्रकाशित वाक्य तक नियमानुसार पढनी चाहिए। तब परमेश्वर का वचन उनका प्रतिदिन का आत्मिक भोजन बन जाएगा। जब हम अपने मित्रों के साथ भोजन करते हैं तो वह भोजन उनकी संगति के कारण अधिक स्वादिष्ट हो जाता है। इस तरह नियमित रुप से सुबह और शाम प्रभु का वचन पढने के द्वारा तथा प्रभु की अगुवाई मालूम करने के द्वारा वे आत्मिक भोजन प्राप्त कर सकते हैं।

आजकल हमें ऐसे मसीही परिवार बहुत कम मिलते हैं जहाँ नियमित रुप से परिवारिक प्रार्थना होती हो। इसी कारण अनेक घरों में झगडे होते हैं। शुरु में वे सप्ताह में एक बार लड़ते है, और वह भी गुप्त रुप से; परन्तु बाद में वे प्रतिदिन लड़ते हे, यहाँ तक की दूसरों के सामने भी लड़ते हैं। क्योंकि उनके घरों में पारिवारिक प्रार्थना नहीं होती इसीलिए उनके बच्चे भी जिद्दी, विद्रोही तथा गुमराह हो जाते हैं। इसलिए उन्हें पारिवारिक प्रार्थना का त्याग नहीं करना चाहिए। उन्हें अपने आत्मिक अनुभवों को जब भी हो सके एक दूसरे के साथ बाँटना चाहिए। प्रेम और सहनशीलता के साथ एक दूसरे की कमजोरी पर विजय पाने मे सहायता करनी चाहिए।

६. खुशी के साथ सेवा :

सुखी वैवाहिक जीवन के लिए छटवा सिध्दान्त यह है कि जहाँ तक सम्भव हो वे दूसरों पर अपना प्रेम प्रदशित करें। तथा दूसरों की सेवा खुशी के साथ करें, तथा इस प्रकार सेवा करने को एक बड़ा सौभाग्य समझें। कुलुस्सियों ३: २३ के अनुसार जो कुछ भी वे करें प्रभु के लिए करें, मनुष्य के लिए नहीं।

जब प्रभु यीशु मसीह और लाजर भोजन कर रहे थे मार्था खुशी के साथ उनकी सेवा कर रही थी। लूका १०:४० में हम पढ़ते हैं, कि मार्था क्रोध, ईर्ष्या, शिकायतों तथा कुड़वुड़ाहट से भरी हुई थी। परन्तु बाद में वह बदल गई। कुछ पति अपनी पत्नियों के विषय में इस प्रकार बात करते है, “मेरी पत्नी बहुत मेहनती है, वह बहुत साफ, समझदार तथा फुर्तीली है, परन्तु वह गुस्सैले स्वभाव की है। जब उसे गुस्सा आता है, तो घर का हर सदस्य कांपने लगता है।” सुखी पारिवारिक जीवन के लिए यह आवश्यक है कि पति-पत्नी दोनों ही मिलकर खुशी के साथ दूसरों की सेवा करें। उनके दिलों में कोंध, ईर्ष्या, शिकायतें तथा कुड़कुड़ नहीं होनी चाहिए। एक मसीह घराना ऐसा परिवार होती है जहां गरीबों, बिमारों तथा जरुरतमन्दों की सहायत की जाती है। वह एक प्रमी परिवार है जहां सबकी बराबर सेवा होती है।

७.प्रभु की उपासना :

सातवाँ सिध्दान्त यह है कि मरियम की तरह वे भी प्रभु की दया और अनुग्रह के प्रति आभारी हो। युहन्ना १२:३ में लिखा है, “तब मरियम ने जटामांसी का आध सेर बहुमोल इत्र लेकर यीशु के पाँवों पर डाला, और अपने बालों से उसके पांव पोंछे, और इत्र की सुगन्ध से

घर सुगन्धित हो गया।” मरियम ने दो कारणों से प्रभु यीशु मसीह के पैरों पर कीमती इत्र उण्डेला था। उसका हदय आभार से भरा हुआ था। क्योंकि उसका भाई जो चार दिनों कब्र के अन्दर था उसे प्रभु यीशु ने जिलाया था। दूसरी बात, उसने यह जान लिया था कि प्रभु यीशु मसीह कोई सामान्य व्यक्ति नहीं है; परन्तु वह स्वयं परमेश्वर है, जिसने मनुष्य जाति का उध्दार करने के लिए मनुष्य-रुप धारण किया था। इस कारण भक्ति से भरे दिल के साथ उसने प्रभु यीशु के पैरों पर इत्र उण्डेला। सुखी परिवार होने के लिए यह आवश्यक है, कि पति-पत्नी में प्रभु यीशु के प्रति भक्ति, स्तुति और उपासना हो। प्रभु के अति आदर हो। उन्हें दिन का प्रारम्भ अपने घुटनों पर गीत गाते गाते, प्रभु यीशु की उपासना के साथ करना चाहिए; तथा दिन का अन्त भी प्रभु यीशु की स्तुति, बडाई और सच्ची भक्ति के साथ उसके अनुग्रह और दया को याद करके करना चाहिए। इससे उनका विश्वास बढ़गा और वे प्रभु यीशु मसीह से और अधिक प्रेम करेंगे। उन्हें उपासना सभाओं में भी पूरा हिस्सा लेना चाहिए। पृथ्वी पर ऐसे ही घराने में स्वर्ग का स्वाद चखा जा सकता है।

८ तीन तरफा एकता :

आठवाँ सिध्दान्त यह है कि उनकी एकता तीन तरफा होनी चाहिए: आत्मा, प्राण और देह में। हमारा सम्पूर्ण व्यक्तित्व तीन भागों से मिलकर बना है। १ थिस्सलुनिका ५:२३ में लिखा है, “शान्ति का परमेश्वर आप ही तुम्हें पूरी रीति से पवित्र करें; और तुम्हारी आत्मा और प्राण और देह हमारे प्रभु यीशु मसीह के आने तक पूरेपूर और निर्दोष सुरक्षित रहे।” सभोपदेशक ४:१२ में हम पढ़ते है, “जो डोरी तीन तागे सें बटी हो वह जंल्दी नहीं

टूटीती।’’गावो मे भारी वजन खींचने के लिए तीन रस्सियों को एक साथ बट कर रस्सी बनी जाती है। तब वह रस्सी बहुत मजबूत हो जाती है। तीन तरफा एकता के महत्व को समझने के लिए हमें यह जानना चाहिए कि परमेश्वर ने हमें आत्मा, प्राण और देह देकर तीन तरफा व्यक्तित्व दिया है। उत्पत्ति २:७ में लिखा है, और यहोवा परमेश्वर ने आदम को भूमि की मिट्टी से रचा और उसके नथनों में जीवन का श्वास फुंक दिया, और आदम जीवता प्राणी बन गया।”

अब आइये, हम देखें कि शरीर, प्राण और आत्मा कैसे बने हैं। शरीर इन तीन भागों से बना है--हड्डियाँ, मांस पेशियाँ तथा लोहु। प्राण के तीन भाग हैं--ज्ञान,भावनाएँ तथा इच्छा शक्ति। ज्ञान हमारे सोचने, सीखने तथा समझने के लिए; भावनाएँ माता-पिता, भाईबहनों, पति-पत्नी, रिश्तेदारों आदि से प्रेम करने के लिए,और इच्छाशक्ति निर्णय लेने के लिए है। परमेश्वर ने हर मनुष्य को स्वतन्त्र इच्छा दी है। हरके व्यक्ति ‘हाँ’ अथवा ‘ना’ कह सकता है। परमेश्वर किसी पर जबरदस्ती नहीं करता। आत्मा भी तीन अंशों से मिलकर बनी है पहला विवेक है, जिसे आन्तरिक आवाज कहते हैं, जो हमें कोई पाप करने के पहले सतर्क करता है,चाहे वह पाप विचारों द्वारा हो, या शब्दों द्वारा, या कार्य द्वारा। कोई भी पाप करने पहले हमें अपने विवेक को मारना पडता है। मान लीजिए मैं झूठ कहना चाहता हूँ; मेरा विवेक मुझे चेतावनी देता है, “सतर्क हो जाओ, झूठ मत बोले।” परन्तु मैं अपने विवेक से कहता हूँ,“तुम चुप रहो।”इसका तात्पर्य है, कि अपने को मारकर ही हम पाप करते हैं। आत्मा का दुसरा अंश है, अनदेखे ईश्वर को देखने आन्तरिक चाह। हर मनुष्य में अपने सृजनहार और ईश्वर को जानने की इच्छा होती है, कि वह कहाँ है और उस मैं कैसे प्राप्त कर सकता हूँ। आत्मा का

तीसरा भाग, हममें आन्तरिक प्रेरणा होती है। अचानक से कही जाने का विचार आता है, कुछ खरीदने या कुछ करने का विचार, बिना उसका कारण जाने।

जब परमेश्वर ने मनुष्य को बनाया तब उसने उसे अपने स्वरुप एंव सदृश्य बनाया (उत्पत्ति १:२६)। और यह इसलिए कि मनुष्य प्रेमी और धर्मी ईश्वर के साथ न टुटने वाली संगति कर सके। जब पाप आया तो उसने इस सच्ची संगति को जो कि पवित्र परमेश्वर के साथ थी नष्ट कर दिया। क्योंकि परमेश्वर के वचन में इब्रानियों १२:१४ में लिखा है, "उस पवित्रता के खोजी हो जिसके बिना कोई प्रभु को कदापि न देखेगा।" हम १ पतरस १:१६ में पढते हैं, "पवित्र बनों, क्योंकि मैं पवित्र हूँ।" इसी तरह मती ५:८ में हम देखते हैं, "धन्य हैं वे, जिनके मन शुध्द हैं, क्योंकि वे परमेश्वर को देखेंगे।"इस तरह से यह बिल्कुल स्पष्ट है, कि बिना पवित्रता के हम परमेश्वर को नहीं देख सकते। पाप के कारण हमारी आत्मा में मृत्यु आ चुकी है। पापी होने के नाते हममें तीन परिवर्तन आ गए है; हमारी आत्मा मर गई है हमारा प्राण अन्धकारमय हो गया हो गया है और हमारा शरीर भी जो पवित्र आत्मा का घर होने के लिए बनाया गया था, गन्दा हो गया है। इसी कारण से हम जब तक पाप में रहतें हैं परमेश्वर की उपस्थित को नहीं जान सकते, उसकी सामर्थ का आनन्द नहीं उठा सकते। क्योंकि हमारी आत्मा मरी हुई है, हम उसकी सच्ची शान्ति का आनन्द नहीं उठा सकते। क्योंकि हमारा प्राण अन्धकारमय है, हम अपने ज्ञान और भावनाओं का दुरुपयोग करते हैं। हम बहुत स्वार्थी और घमण्डी हैं तथा घृणा, कोध, कड़वाहट, ईर्ष्या, शक तथा अपनी जिद्द से भरे हुए हैं। अपने शरीर के अंगो का दुरुपयोग करकें हम अपने शरीर में आप और गन्दगी ले आते हैं।

यूहन्ना ४:२४ में हम पढते हैं, परमेश्वर आत्मा है, और अवश्य है कि उसके भजन करने वाले आत्मा और सच्चाई से भजन करें।" जब तक हम आन्तरिक रुप से शुध्द न हो, धर्मी एवं जीवित परमेश्वर के साथ हम अटूट संगति नहीं कर सकते। १ युहन्ना १:७ तथा इब्रानियों ९:१४ अनुसार केवल प्रभु मसीह के लोहु में ऐसी सामर्थ है, जिससे हमारा विवेक शुद्ध होता है और पाप के सब दाग धो दिये जाते हैं। जब पवित्र आत्मा हमको हमारे पापों के विषय कायल करता है और हमारी सहायत करता है जिससे कि हम अपने पापों को मान लेते हैं तब हम सच्चे पश्चातापी दिल से अपने पापों को मानकर अपने दिल से यह विश्वास करते हैं कि प्रभु यीशु मसीह हमारे लिए मर गया, हमारे पापों को लेकर दफन हो गया फिर से जीवित हुआ ताकि वह हममें जीये और हमारा जीवन और धार्मिकता बन जाये। इतना करते ही हमारे सारे अपराध माफ हो जाते हैं। उसके कीमती लोहु के द्वारा हमारा सारे अपराध माफ हो जाते हैं। परमेश्वर की उपस्थित बहुत ही स्पष्ट रुप से महसुस करने लगते हैं।

जब हमारा दोषी विवेक प्रभु यीशु के कीमती लोहु से धुलता है तो हममें ऊपर उठाने वाले तीन परिवर्तन होते हैं। हमारी मरी हुई आत्मा जीवित आत्मा बन जाती है, क्योंकि पवित्र आत्मा आकर हमारे शुध्द किये हुये आत्मा में रहने लगता है। इसे ही नया जन्म कहते हैं। इस अनुभव के बाद हम परमेश्वर के वचन की गुप्त बातों को समझने लगते है, प्रार्थना में प्रभु से खुलकर बातें कर सकते है, और हममें यह इच्छा जागृत होती है कि सिद्ध इच्छा को पूर्ण करें। हमारा अन्धकारमय प्राण प्रकाशित हो जाता है और हम अपनी भावनाओं का उचित उपयोग करने लगते हैं। जिनसे पहले प्यार नहीं करते थे अब उनसे प्यार करने लगते हैं, स्वर्गीय बातों से प्यार करने ल गते हैं, और सब बातों में परमेश्वर की इच्छा का पालन करने लगते हैं।

हमारा शरीर भी साफ और निर्मल हो जाता है। हम इसे पवित्र आत्मा के मन्दिर के रुप में रखना चाहते है, और इसके अंगों का गलत प्रयोग नहीं करते।

वे लोग जो इस तीन तरफ एकता के सिध्दान्त का पालन करते है, उनका वैवाहिक जीवन फलवन्त एवं सुखी होती है। उन्हे सबसे पहले आत्मिक एकता की इच्छा करनी चाहिए। इसका मतलब है उन्हें अपने दिन का प्रारम्भ और अन्त अपने घुटने पर आकर प्रभु के वचन के साथ करना चाहिए। उन्हें साथ मिलकर प्रार्थना के द्वारा प्रभु की इच्छा मालूम करना चाहिए। उन्हें साथ साथ उपासना करनी चाहिए और जहाँ तक सम्भव हो एक साथ प्रभु के भवन में जाना चाहिए। कुछ पति कहते हैं, “मेरा पत्नि को प्रार्थना करने दो, मैं तो अपने काम में बहुत व्यस्त हूँ।” परन्तु साथ साथ प्रार्थना करना बहुत आवश्यक है। दूसरी बात, प्राण की एकता के लिए उन्हें यह निश्चित करना चाहिए कि उनका प्रेम शारीरिक आकर्षण, धन-सम्पत्ति, शिक्षा पर आधारित नहीं है। उन्हें बिना स्वार्थ के एक दूसरे से प्रेम करना चाहिए। उनके विचार,मित्र, लगाव, इच्छाएँ, सार्थ एवं रहस्य एक समान होना चाहिए। तीसरी बात, उनकी शारीरिक संगति बहुत पवित्र होनी चाहिए। उन्हें एक दूसरे के लिए बहुत आदर होना चाहिए, और एक दूसरा की आवश्यक्ता को आपस में समझना चाहिए। उन्हें अपना विवाहित जीवन प्रार्थना के साथ जीना चाहिए, और याद रखना चाहिए कि उन्हें ईश्वरीय बीज उत्पन्न करना है। मलाकी २:१५ में लिखा है “क्या उसने एक ही को नहीं बनाया, जब कि और आत्माएँ उसके पास थी; और एक ही को क्यों बनाया? इसलिए कि वह परमेश्वर के स्वभाव वाले बच्चे माँगना चाहिए; नहीं तो उनके बच्चे जिद्दी और विद्राही हो जायेंगे।

इस प्रकार से अपने व्यक्तित्व के असली स्वभाव को समझकर हम शरीर और आत्मा के भेद को आसानी से देख और समझ सकते है। बहुत से लोग कहते हैं, कि वे शरीर के द्वारा चलाये जाते है, और आसानी से धोखा खा जाते है। कई तरह की चालाकियों के द्वारा शैतान हमारे विश्वास को कमजोर करना चाहता है, और हमें सच्चे प्रेम और शान्ति से वंचित कर देना चाहता है। आत्मा में प्रार्थना के द्वारा, प्रभु की सिद्ध इच्छा हर बाते में पुर्ण करने के द्वारा, तथा पवित्र आत्मा की अगुवाई के द्वारा हम परमेश्वर की सहायता प्राप्त कर सकते है और उसकी स्वर्गीय योजना में बने रह सकते हैं।

ये सरल ईश्वरीय सिध्दात हैं, जिनके द्वारा दुनिया में कही भी पति-पत्नि सुखी पारिवारिक जीवन जी सकते हैं। हमारी प्रार्थना है, कि हमारा प्रभु इन नियमों को उनके हदयों में लिख दे जो उसके द्वारा साथ जोड़े गए हैं। यदि वे इन सिध्दान्तों का पालन करेंगे तो उनके परिवार आनन्द और आशीष से भर जायेंगे। उनका घर शान्ति, आनन्द, प्रेम , सेवा, प्रभु की उपस्थिति, विश्वास, संगति से भर जायेगा। उस घर में ईश्वर के नाम को आदर और महिमा मिलेगी। ऐसे घराने के द्वारा बहुतेरे आशीष पायेंगे। पृथ्वी पर ऐसे मसीही घराने में ही स्वर्ग का स्वाद चखा जा सकता है।